International Journal of Research
e-ISSN: 2348-6848 & p-ISSN 2348-795X Vol-5, Special Issue-9
International Seminar on Changing Trends in Historiography: A Global Perspective
Held on 2nd February 2018 organized by The Post Graduate Department of History. Dev Samaj College for Women, Ferozepur City, Punjab, India

प्राचीन भारत में पितृसत्तात्मकता का समाजशास्त्रीय विकास

अमित कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, देव समाज कालेज फॉर वीमेन, फिरोजपुर शहर, पंजाब

मनिंदर कौर

छात्रा, MA, इतिहास, (द्वितीय वर्ष) देव समाज कालेज फॉर वीमेन, फिरोजपुर शहर, पंजाब

शोध संक्षेप

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि सृष्टि की रचना स्त्री व पुरुष दोनों से मिलकर हुई है. इस रचना विधान में दोनों ही समान रूप से महत्वपूर्ण हैं. किसी एक से यह संसार नहीं बसा पर फिर भी समाज पुरुष प्रधान है. सांसारिक शक्तियों पर पुरुषों का ही अधिकार है. इस व्यवस्था को ही पितृसत्तात्मकता की संज्ञा दी गयी है. मेरे इस अनुसंधान में मैं पितृ सत्तात्मकता की संरचना, विकास, स्त्री स्थिति के सन्दर्भ में इतिहास में व्याप्त तथ्यों का विश्लेषण करने का प्रयास करूंगी.

मुख्य शब्द : पितृसत्तात्मकता, मनोविज्ञान, पुरुष प्रधान समाज

भूमिका

पितृसत्तात्मकता अंग्रेजी शब्द *पैट्रियार्की* का हिंदी समानार्थी है जो ग्रीक के *पैटर* और *आर्क* को जोड़कर बनाया गया है. *पैटर* का अर्थ है *पिता* और *आर्क* का अर्थ है *शासन* . अतः पैट्रिआर्की का अर्थ है *पिता का शासन*. भारत में यह प्रथा प्राचीन काल से अभी तक चली आ रही है. परिवार के बिना सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करना कठिन है. महिलाओं के लिए परिवार अनिवार्य है जहाँ उसके बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित होती है.

पितृस्तामक व्यवस्था के बारे में परम्परावादी लोगों के विचार हैं कि पुरुष जन्म से ही सशक्त और स्त्री अधीनस्थ रही है. उनके अनुसार यह पदानुक्रम शुरू से आज तक चली आ रही है और कुदरत का यह नियम आगे भी चलता रहेगा. अनेक विद्वान पुरुष सत्ता को कुदरती मानते हैं तो अनेक इसके सामाजिक उत्पत्ति का सिद्धांत बताते हैं. अरस्तु[1] के अनुसार 'पुरुष चुस्त और स्त्री सुस्त है, जिनके पास अंतरात्मा नहीं होती उन पुरुषों को स्त्री खराब सकती है. स्त्री जैविक तौर पर निम्न है और क्षमता का उसमे अभाव है. पुरुष , स्त्री से सशक्त है और उसका जन्म स्त्री पर राज करने के लिए हुआ है'. आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार स्थिति उल्टी है, स्त्री में धैर्य व सहनशीलता पुरुषों की तुलना में अधिक है. सिगमंड फ्रायड[2] के अनुसार "आम मनुष्य केवल पुरुष है, स्त्री मनुष्यता की गरिमा से नीचे के पायदान पर खडी है". भले ही यह उनके मनोविश्लेषण का निष्कर्ष हो लेकिन आम धारणा इसका समर्थन नहीं करती. वस्तुतः पितृसत्तात्मकता पुरुषों द्वारा बुना गया इक जाल है. हालाँकि फ्रेडरिक एंगेल्स कहते हैं कि औरतों की अधीनता एक ऐतिहासिक विकास है.[3]

धार्मिक ग्रन्थ परोक्ष तौर पर पुरुष प्रधानता को समर्थन देते प्रतीत होते हैं और इसके पीछे प्रधान कारण शायद यह है कि सभी धर्मों का उद्भव पुरुषों के माध्यम से ही हुआ है. स्त्री के साथ ही परिवार का आविर्भाव हुआ है. परिवार

[1] अरस्तु एक यूनानी दार्शनिक थे जिनके गुरु थे प्लेटो. अरस्तु को सिकंदर का राजनैतिक गुरु भी माना गया है.

[2] सिगमंड फ्रायड विश्व में मनोविश्लेषण के जनक माने जाते हैं.

[3] Angels, Fredrik (1902), *The Origine of The Family Private Property and the State*, Chicago: Charles H Carr.

International Journal of Research
e-ISSN: 2348-6848 & p-ISSN 2348-795X Vol-5, Special Issue-9
International Seminar on Changing Trends in Historiography: A Global Perspective
Held on 2nd February 2018 organized by The Post Graduate Department of History. Dev Samaj College for Women, Ferozepur City, Punjab, India

पुरुषों की खोज नहीं है. स्त्री को परिवार की आवश्यकता इसलिए थी क्यों कि वह एक 'माँ' है. माँ जहाँ एक तरफ शक्तिशाली है वहीँ दूसरी तरफ बहुत विवश भी. यह विवशता है उसकी संतान की सुरक्षा के लिए उसके फ़िक्र के कारण . इसीलिए विवाह संस्था अस्तित्व में आयी. विवाह संस्था से परिवार, समाज, रिश्ते-नाते सारे जाल बन जाते हैं लेकिन मूल में है विवाह. विवाह स्त्री की तरफ से तो संतान की सुरक्षा के लिए था लेकिन पुरुष की तरफ से यह स्त्री पर आधिपत्य जमाने के लिए हो गया. आधिपत्य भी स्थूल नहीं वरन सूक्ष्म!

पुरुष ने स्त्री को प्रतिष्ठा से जोड़ दिया. प्रतिष्ठा स्त्री के पैरों में वह सूक्ष्म बेडी बनी जिसमे बंधकर वह युगों से सिसक रही है.

नारीत्व और मातृत्व के ये द्वन्द धर्म और दर्शन सुलझा नहीं सके. पुराण व महाकाव्य स्त्री विवशताओं के दर्पण मात्र हैं. जब कुंती राजकुमारी होकर भी अपने पुत्र को नदी में बहाने को विवश हो जाती है. जब द्रौपदी पांच पुरुषों से व्याही जाती है. जब संतति या वंश-रक्त की शुद्धता का दारोमदार मात्र स्त्री के कन्धों पर ही होता है[4]. चूँकि साहित्य और इतिहास की ये व्याख्याएं शांति और व्यवस्था के लिए उपयुक्त भी मानी जाती हैं.[5]

इतिहास में खंगाले तो सिन्धु घाटी की सभ्यता एक मात्र स्त्री प्रधान समाज रहा है. तत्कालीन स्त्री उत्पादन के साधनों पर मालकियत रखती थी. मोहनजोदड़ो से प्राप्त 'नर्तकी की कांस्य प्रतिमा' स्त्री की स्थिति के सन्दर्भ में बहुत कुछ संकेत करती है. पूरे हड़प्पा संस्कृति में किंचित ही पुरुष प्रतिमाएं मिली हैं लेकिन 'स्त्री प्रतिमाएं' बहुत मिली हैं. स्त्री का महत्व धार्मिक रहा होगा ऐसा संकेत मिलता है.[6]

पूर्व वैदिक काल में भी हम स्त्री की स्थिति मजबूत ही पाते हैं. घोषा और लोपमुद्रा[7] जैसी विदुषी स्त्रियाँ तो ऋग्वेद की रचयिताओं में से हैं. समाज स्त्री प्रधान था. पुत्री के जन्म पर दुःख नही व्यक्त किया जाता था. औरत व पुरुष के अधिकार बराबर थे. वृहदकारन्यक उपनिषद में पुत्री को सन्तान के रूप में पाने के लिए अनुष्ठान का उल्लेख है.[8] वे वैदिक संहिताओं का अध्ययन करती थीं, देवताओं के लिए यज्ञ करतीं थीं. विधवा पुनर्विवाह कर सकती थी. कन्या को वर चुनने और मर्जी से विवाह करने का अधिकार था. ऋग्वेद में विधवाओं को विवाह का विधान है , एक सूत्र में कहा गया है- "उठो! अपने मृत पति से दूर जाओ और पुनः विवाह करो !"[9]

पितृसत्तात्मकता का विकास वस्तुतः उत्तर वैदिक काल में हुआ. समाज पितृ प्रधान बन गया. स्त्री की स्थिति में भारी गिरावट आयी ब्राह्मण ग्रन्थ प्रकाश डालते हैं कि पुत्र , पुत्रियों से श्रेष्ठ समझे जाने लगे , यद्यपि पुत्रियों को शिक्षा देने की प्रथा कायम रही.[10] महाभारत काल तक आते आते स्त्रियों को धन समझा जाने लगा और धर्मराज युधिष्ठिर तक अपनी पत्नी को दाँव पर लगाने लगे. वासुदेव कृष्ण की 16 हजार पत्नियाँ बतायीं जातीं हैं. इससे घोर बहु पत्नीत्व का पता चलता है. उत्तरवैदिक काल के बाद हालत तो यह हो गयी कि स्त्रियों के धार्मिक अधिकार भी छिन गये. स्मृति काल तक आते आते पितृसत्तात्मकता पूरी तरह से स्थापित हो चुकी थी.[11]

---

[4] हालाँकि वैज्ञानिकता के विकास ने डी एन ए की खोज के बाद यह स्थिति अब बदल दी है.

[5] शर्मा, पी डी (2017), महिला सशक्तिकरण और नारीवाद, जयपुर: रावत प्रकाशन, पेज 24,25

[6] प्रसाद, ओमप्रकाश और प्रशांत गौरव (2011), *प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास,* नई दिल्ली: राजकमल , पेज-82

[7] लोपामुद्रा को अगस्त्य ऋषि की पत्नी कहा गया है

[8] वही

[9] सिंह, वी.एन. और जनमेजय सिंह (2012), *नारीवाद,* जयपुर: रावत प्रकाशन, पेज 34

[10] वही, पेज 35

[11] झा, विजय कुमार, *पितृसत्ता को कैसे समझें,* Retrived at 15/08/2017, URL: www.hindisamaj.com

International Journal of Research
e-ISSN: 2348-6848 & p-ISSN 2348-795X Vol-5, Special Issue-9
International Seminar on Changing Trends in Historiography: A Global Perspective
Held on 2nd February 2018 organized by The Post Graduate Department of History. Dev Samaj College for Women, Ferozepur City, Punjab, India

विश्व प्रसिद्ध दार्शनिक ओशो कहते हैं 'समाज में स्त्री कहाँ है? स्त्री का अस्तित्व कहीं नहीं है, माँ का अस्तित्व है, बहन का अस्तित्व है, बेटी का है, पत्नी का है, मगर नारी का अस्तित्व कहीं नहीं है, उसका कोई व्यक्तित्व नहीं है, नारी का अस्तित्व मात्र उतना ही है जीतनी पुरुष उसे देता है, जिस मात्रा में वह पुरुषों से सम्बंधित होती है, पुरुष से सम्बन्ध ही उसका अस्तित्व है. उसका अस्तित्व पुरुष के अस्तित्व में लीन है'[12]. वस्तुतः ओशो स्त्री को समुचित व्यक्तित्व देने की वकालत करते हैं.

परम्परागत क़ानूनी रिवाज के अनुसार "स्त्री भारतीय समाज में एक धन से अधिक कुछ भी नहीं"[13]

निष्कर्ष

स्त्री का वर्तमान उस बंधन को तोड़ने की तरफ आगे बढ़ रहा है जो धर्म-संस्कृति, रीति-रिवाज, सभ्यता-सदाचार आदि के रूप में उसपर डाला गया था. इसमें प्रमुख योगदान है वर्तमान शिक्षा और प्रायोगिक ज्ञान की तरफ उसके झुकाव का. समाज में स्त्री सशक्तिकरण की तरफ आज जो पुरुष समर्थन खड़ा हो रहा है वह पहले कभी नहीं था. धर्म, परम्परा और मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर कस कर ही आज की शिक्षित नारी अपना रही है. आज की नारी ओजस्वी और आत्मनिर्भर है. वह अनुसंधान कर रही है और पुरुष वर्चस्व को चुनौती दे रही है लेकिन एक बड़ा खतरा आगे अभी भी दिखाई दे रहा है और वह है कि कहीं स्त्री सशक्तिकरण पुरुष तुलना और प्रतिक्रिया तक ही सीमित होकर न रह जाए?

सन्दर्भ सूची

1. Angels, Fredrik (1902), *The Origine of The Family Private Property and the State*, Chicago: Charles H Carr.
2. देसाई, नीरा और उषा ठक्कर (2014), *भारतीय समाज में महिलाएं,* दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट
3. झा, विजय कुमार, *पितृसत्ता को कैसे समझें,* Retrieved at 15/08/2017, URL: www.hindisamaj.com
4. प्रसाद, ओमप्रकाश और प्रशांत गौरव (2011), *प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास,* नई दिल्ली: राजकमल
5. रजनीश, आचार्य श्री, (1982), *अस्वीकृति में उठा हाथ,* पूना: रीबेल प्रकाशन
6. शर्मा, पी डी (2017), महिला सशक्तिकरण और नारीवाद, जयपुर: रावत प्रकाशन
7. सिंह, वी.एन. और जनमेजय सिंह (2012), *नारीवाद,* जयपुर: रावत प्रकाशन

[12] रजनीश, आचार्य श्री, (1982), *अस्वीकृति में उठा हाथ,* पूना: रीबेल प्रकाशन, पेज 132

[13] देसाई, नीरा और उषा ठक्कर (2014), *भारतीय समाज में महिलाएं,* दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट, पेज 63